International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(2): 62-64

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(2): 62-64
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 04-01-2021
Accepted: 06-02-2021

मोनिका देवी
(शोध छात्रा) संस्कृत एवं पालि विभाग पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, पंजाब, भारत

डा. वीरेंदर कुमार
शोध निर्देशक संस्कृत एवं पालि विभाग पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, पंजाब, भारत

Corresponding Author:
मोनिका देवी
(शोध छात्रा) संस्कृत एवं पालि विभाग पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, पंजाब, भारत

पतंजलि योग दर्शन मे ंअष्टांग योगः एक दृष्टि

मोनिका देवी एवं डा. वीरेंदर कुमार

सारांश
प्राचीन समय से भारत मे ंयह विचार चला आया है कि हम साधना द्वारा ऐसी अनेको ंभौतिक और मानसिक सिद्धियाँ प्राप्त कर सकते हैं जो साधारण मनुष्य में नहीं पाई जाती, शारीरिक तथा मानसिक क्रियाओं के संयम से हमें दुःख से छुटकारा पाने मे ंसहायता मिलती है। योग दर्शन का महत्व दर्शन शास्त्रों मे ं नहीं, अपितु हमारे जीवन से भी इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। ''शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्'' अर्थात् धर्म की क्रिया के लिए शरीर माध्यम है। ''स्वस्थ मन स्वस्थ शरीर मे ंरहता है।'' इस मान्यता के आधार पर योग दर्शन में शरीर के महत्व पर बल दिया गया है। पुरुषार्थ की प्राप्ति के लिए शरीर, इन्द्रियों एवं चित्त को स्थिर करना भी आवश्यक है। योग वह अभ्यास है जिसके किए जाने पर न केवल भौतिक वरन् अध्यात्मिक शक्तियो ंकी उपलब्धि की जा सकती है योग के प्रवर्तक पतंजलि माने जाते है। योग के अनुसार मोक्ष ही जीवन का अन्तिम लक्ष्य है।

संकेत शब्दः पतंजलि योग, प्राचीन समय से भारत, ंभौतिक और मानसिक सिद्धियाँ

प्रस्तावना
''दर्शन शास्त्र की प्रगति साधारणतः किसी ऐतिहासिक परम्परा मे ंहोने वाले किसी प्रबल आक्रमण के कारण सम्भव होती है। चिन्तन की उस शक्ति का साधन, जो सीधी जीवन और अनुभव से फुटती है, जैसा कि उपनिषदों में है और आत्मा की उस आलौकिक महानता का स्थान जो परब्रह्मा का दर्शन और गान करती है जैसा कि भगवदगीता मे ंहै, कठोर दर्शन ले लेता है।''[1] उस युग की सर्वमान्य भावना का आग्रह था कि प्रत्येक ऐसी विचारधारा जो तर्क की कसौटी पर खरी उतर सके, ''दर्शन'' के नाम से ग्रहण करना चाहिए। [2] दर्शन उस प्रयास का ही दूसरा नाम है जो मानव समाज के बढ़ते हुए अनुभव की व्याख्या के लिए किया जाता है। भारतीय दर्शन का सर्वप्रथम बीज हमे ंऋग्वेद मे ंदृष्टिगोचर होता है यह दर्शन सर्वदेववाद वाला है। भारतीय दर्शन वह अथाह सागर है जिसमे ं जितना अधिक अवगाहन किया जाए, उतने ही अधिक रत्नो ंकी प्राप्ति होती है। [3] सभी प्रकार के दर्शनो ंमे ंछः दर्शन अधिक प्रसिद्ध हुए, महर्षि गौतम का 'न्याय' कणाद का 'वैशेषिक' कपिल का 'सांख्य' पतजंलि का 'योग' जैमिनी का 'पूर्व मीमांसा' और वादरायण का उत्तर मीमांसा अथवा वेदान्त। ये सभी वैदिक दर्शन के नाम से जाने जाते हैं [4] क्योकि ये वेदो ंकी प्रमाणिकता को स्वीकार करते हैं। ये ही दर्शन आस्तिक दर्शन कहलाए।
जो दर्शन वेदो ंकी प्रमाणिकता को स्वीकार नहीं करते उन्हें नास्तिक की संज्ञा दी गई । पूर्व मीमांसा को छोड़कर अन्य सभी दर्शनो ंका लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति के क्रियात्मक उपायो ंको ढूढं निकालना है। मोक्ष का अर्थ इन शास्त्रो ंके अनुसार है जीवात्मा का पाप अथवागलतियो ंसे छूटकर अपने शुद्ध स्वरुप को पहचानना व उसे प्राप्त करना। [5]

यथोक्तम् – ''योगश्चित वृत्ति निरोधः।'' [6]

आस्तिक दर्शन हो या नास्तिक दर्शन हो योग की महत्ता को सभी ने सर्वसम्मति से स्वीकार किया है। पतंजलि प्रतिपादित योग मन को निश्चल करने तथा समाधि अवस्था प्राप्त करने की प्रक्रिया का विस्तार से प्रतिपादन करता है।
योग शब्द की उत्पत्ति तीन धातु शब्दो ंसे हुई है– युजिर् योग और युज् समाधौ अर्थात् युजिर् का अर्थ है मिलाना और युज् नियन्त्रण के अर्थ मे। योग का एक दर्शन के रुप मे ंसांख्य प्रवचन है। योग का प्रथम आचार्य हिरण्यगर्भ को माना गया है। [7]

''हिरण्यगर्भोयोगस्य वक्ता नान्यः पुरातनः'' [8]

वासुदेव भी सभी दृष्टियो के योग के प्रवर्तक है। इसी कारण वासुदेव को योगेश्वर कहा जाता है।
योग दर्शन के प्रवर्तक पतंजलि है। उसकी व्याख्या योग सूत्र मे की गई । यह एक अव्यवस्थित ग्रन्थ है। पतंजलि के अनुसार मानवीय प्रकृति के भिन्न–भिन्न तत्वो के नियत्रंण द्वारा पूर्णता प्राप्ति के लिए किया गया विधिपूर्वक प्रयत्न ही योग है।
पतंजलि का मुख्य लक्ष्य अध्यात्मिक सिद्धान्त का प्रति पादन नहीं, बल्कि क्रियात्मक रुप से यह संकेत करना था कि संयमी जीवन द्वारा किस प्रकार मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है।

''समत्वं योग उच्यते'' [9]

योगसूत्र चार पादो मे विभक्त है जिनके नाम क्रमशः ये है– समाधि पाद, साधनपाद, विभुतिपाद तथा कैवल्य पाद। योगदर्शन व्यक्त, अव्यक्त और ज्ञ के ज्ञानमात्र से कैवल्य नहीं मानता। पतंजलि ने स्वयं अपने ग्रन्थ को 'अनुशासन' कहा है वैयाकरण पतंजलि का काल द्वितीय शताब्दी ई. पू. बताया गया है। योग दर्शन 25 तत्वो को स्वीकार करता है। भगवद गीता मे कहा है ''योगः कर्मसु कौशलम्'' अर्थात योग को कर्म करने मे कुशलता कहा गया है। [10], तप, स्वाध्याय ईश्वर प्रणिधान इन्हें ही योग का साधन कहा जाता है।

- तप–के अन्तर्गन गुरु–सेवा, सत्य बोलना आदि व्रत आते हैं।
- स्वाध्याय के अन्तर्गत ब्रह्मरुपी विद्यायो का अध्ययन करना।
- ईश्वर प्रणिधान फल की कामना न करते हुए कृतकर्मो को परम गुरु रुपी ईश्वर को सौंप देना ईश्वर प्रणिधान है। [11]
- इन्हें चार प्रकार के कलेशो का पतन का कारण माना जाता है। ये क्लेश अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष का अन्त ही योग के साधनो का मुख्य लक्ष्य है।

''इमं गुण समाहार मनात्मत्वेन पश्यतः
अन्तः शोतलता यस्य समाधिरिति कथ्यते।'' [12]

अनेक प्रकार के कष्टो पर विजय पाने के लिए योग हमे आठ प्रकार के उपाय बताता है इन्हें ही अष्टांग योग कहा जाता है। इन आठ अंगो में पहले पाँच को बहिरंग (अप्रत्यक्ष) साधन कहा गया है। यह योग रुपी वृक्ष, चित रुपी खेत मे यम–नियम के द्वारा बीज प्राप्त करता है, प्रत्याहार के द्वारा फूल लगते हैं,
अन्त मे धारणा आदि अन्तरंग साधनो के द्वारा फलवान होता है।
बाह्य व आभ्यन्तर इन्द्रियों के संयम की क्रिया को यम कहते हैं यह नैतिक साधना पर बल देते हैं जो योग अभ्यास के लिए आवश्यक है यह पाँचप्रकार है– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, यथोक्तम् योगसूत्रे–

''अहिंसासत्यास्तेय ब्रह्मचर्या परिग्रहाः यमाः।'' [13]

अहिंसा का अर्थ है हर प्रकार से व हर समय मे समस्त जीवित प्राणियों के प्रति द्वेषभाव से परहेज करना।

''सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामभिद्रोहः'' [14]

मनुष्य को सदाचार की ओर प्रवृत करने वाले कर्मों को नियम कहा जाता है नियम भी पाँच है यथोक्तम्

''शौचसन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानिनियमः'' [15]

जिस अवस्था में शरीर यथोचित समय तक स्थिर व सुख से रह सके उसे ही आसन कहते हैं। आसनो से मन की एकाग्रता में सहायता मिलती है। पतंजलि कहते हैं कि आसन दृढ़, सुखावह और सरल होना चाहिए।
आसन कई प्रकार के होते हैं– शीर्षासन, मयूरासन, पद्मासन आदि।
श्वास–प्रश्वास का जो गति विच्छेद है उसे चित्त को एकाग्र रखना ही यथार्थ प्राणायाम है। बाहरी वायु का लेना श्वास है भीतरी वायु का निकालना प्रश्वास है इसके तीन भेद हैं। [16]

रेचक :– जब प्रश्वास बराबर चले, श्वास रुक जाए वह रेचक प्राणायाम होता है।

पुरक :– जब प्रश्वास रुक जाए, श्वास बराबर चलता रहे वह पुरक प्राणायाम होता है।

कुंभक :– जब दोनो का प्रवाह रुक जाए। बाहर श्वास रोकने को बाह्य कुंभक और अन्दर श्वास रोकने को अन्तः कुम्भक कहा गया है। [17]
इन्द्रियो को बाह्य विषयो से हटाकर उन्हें अन्तः मुखी करना या मन के वश मे करना ही प्रत्याहार है इसके दो साधन–बाह्य विषयो पर ध्यान न देना, मानस भाव लेकर रहना। [18]
चित्त को किसी सूक्ष्म या स्थूल एक देश या विषय पर केन्द्रित करना ही धारणा है। योग का कहना है कि चैतन्य को निरन्तर बाह्य क्रियाओ तथा आभ्यन्तर परिवर्तनो से हटाकर ही सत्य को जाना जा सकता है।
समाधि चित्त की सर्वोतम अवस्था है इस अवस्था में ध्यान, ध्याता, व ध्येय की इच्छा समाप्त हो जाती है तथा चित्त ध्येय विषय मे पूर्णतः लीन हो जाता है। [19]

समाधि दो प्रकार की है सम्प्रज्ञात, असम्प्रज्ञात।

योगाभ्यास करने से व्यक्ति को विशेष अवस्थाओ में अष्ट सिद्धियों की प्राप्ति होती है। योगी इच्छानुसार इनका प्रयोग कर सकता है। गम्भीरता के साथ एकान्त मे ध्यान अवस्थित होना और उसके साथ शारीरिक व्यायाम तथा आसनो का प्रयोग, ये सब हमारे मन को एक प्रकार से सांचे मे डालने मे सहायक है। योगसाधन शरीर, मन और आत्मा को पवित्र करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, इन्हें उस आनन्दमय दर्शन के लिए तैयार करना ही इसका कार्य है।
अधिकांश व्यक्ति अपनी आँखें आधी बन्द करके आलसी मन तथा बोझ से दबे ह्रदय के साथ जीवन यापन करते हैं और तुरन्त कतिपय व्यक्ति भी जिनके सम्मुख दर्शन तथा जागरण के वे दुर्लभ क्षण आते हैं परन्तु शीघ्र ही निद्रालु अवस्था मे डूब जाते हैं।
श्वास मे एक समानता कभी–कभी सम्मोहन की प्राप्ति का साधन बन जाती है यही कारण है कि याग–विद्या को इतना अधिक गुप्त रखा गया है।
अतः आत्मा की शक्तियो को पहचानने के लिए एकान्त सेवन तथा मौन आवश्यक है जिससे उन क्षणों मे विलीन होने पर प्रकाश के द्वारा अपना सम्पूर्ण जीवन आलौकिक कर सके। यथोक्तम्–
''इदं तु विश्वं भगवानिवेतरो'' ईश्वर और विश्व ही एकता के परिचायक है।

संदर्भ

1. सर्वपल्ली राधा कृष्णन, 1969 ''भारतीय दर्शन'' रायसीन प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 17
2. राधा कृष्ण, पृ. 18
3. गुप्ता, सरोज. 2005 ''भारतीय दर्शन'' शिवालिक प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 8
4. ऋषि, उमाशंकर 2012 ''सर्वदर्शन संगंह'' चौरवम्भा प्रकाशन, वाराणासी, पृ. 3

5. पतंजलि, 1982 ''योगसूत्रम्'' चौरवम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणासी, पृ. 1
6. गुप्तदास, जे.के. 2012, ''षड्दर्शन सूत्रसंगंह'' चौरवम्भा सुरभाती प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 144
7. गुप्तदास, ैण्छ ;1973द्ध ''भारतीय दर्शन का इतिहास'' भा. – 3, राजस्थान हिन्दी ग्रन्था अकादमी, जयपुर, पृ. सं–490
8. पतंजलि, 1982 ''योगसूत्रम्'' चौरवम्भा प्रकाशन, वाराणासी, पृ. 7
9. योगस्थः कुरु कर्माणि सड्गं व्यक्त्वा धनञ्जय। सिद्धयासेद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उज्यते।।
10. ''लोकेडस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानध ज्ञानयोगेन साडख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्।।
11. त्रिपाठी, आनन्द प्रकाश 2007 ''सांख्य योग'' युनवर्सिटी बुक हाऊस, जयपूर, पृ. 94
12. ऋषि, उमाशंकर, 2012, ''सर्वदर्शन संग्रह'' चौरवम्भा प्रकाशन, पृ. 555
13. त्रिपाठी, आनन्द प्रकाश, 2007, ''सांख्य योग'' विश्वविद्यालय बुक हाऊस, जयपूर, पृ. 93
14. पतंजलि, 2012 ''योगभाष्य'' चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 30
15. पइपक
16. पतंजलि , 2012 ''पातञ्जल दर्शनम् (सर्वदर्शन संग्रह), चौखम्भा प्रकाशन, पृ. 555
17. माधव, '' 2012 ''सर्वदर्शन संग्रह'', चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 93
18. माधव, पृ. 93
19. योगी, सदानन्द ''वेदान्तसार'' 2005 चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 80